Received: May '22
Revised:
Accepted: June '22

© 2022 by the authors. This article is an open access article distributed under the terms and conditions of the Creative Commons Attribution (CC BY) license (https://creativecommons.org/licenses/by/4.0/).

हिन्दी कथा साहित्य में नारी संवेदना का उदय

डॉ. बृजेन्द्र कुशवाहा
अतिथि विद्वान, शासकीय ठाकुर रणमत सिंह विश्वविद्यालय, रीवा मध्यप्रदेश

महिला लेखन ही यह अन्यतम उपलब्धि है कि उसने एक ओर नारी ह्रदय को विविध कोणों से परखकर इमानदार अभिव्यक्ति प्रदान की ओर दूसरी ओर नारी को परंपरा पोषित मान्यताओं के पाश से मुक्त करके 'मानवी' के रूप में प्रतिष्ठित किया। भारतीय आदर्शों में रची–बसी सती नारी के स्थान पर उस नारी का चेहरा सापने आया जिसे अपनी महत्ता और अस्मिता पर गर्व था। महिला लेखन पुरुष की बँधी–बँधायी पूर्वाग्रह से संचित दृष्टि को त्याग कर नारी को व्यक्ति रूप में देखने का पक्षहार है जहॉ पुरुष सापेक्ष भूमिकाओं की सीमित पनिधि से मुक्त होकर एक विशुद्ध नारी के रूप में उसकी पहचान सम्भव हो। वह नारी जिसके मन में अपनी शारीरिक, मानसिक, सामाजिक और आर्थिक दुर्बलताओं के प्रति दया का भाव नहीं उपजता, देह संस्कार,संवेदना और विवेक किसी भी स्तर पर वह अपना मूल्यांकन परम्परागत पुरुष निर्मित प्रतिमानों के आधार पर नहीं करती।

स्त्री–लेखन के वैकल्पिक मानदंडों के निर्माण की जब कोशिशें शुरू की गई तो उन्हें 'खास' या 'विशिष्ट' या 'स्पेशल केस' के रूप में देखा गया। फलतः स्त्री लेखन हाशिए पर चला गया या 'स्त्री अध्ययन'से 'स्त्री लेखन' को जोड़कर विशेष पाठ्यक्रम बनाकर मुख्य धारा के साहित्य से अलग करके पेश किया गया। साहित्य में व्याप्त इस लिंगभेद को समाप्त करना आवश्यक है। स्त्री लेखन को केवल स्त्री समस्याओं से जोड़ना एक प्रकार से केंचुआ प्रवृत्ति ही है। इस संकुचित तथा लिंगभेदीय वृत्ति से हिंदी साहित्य मुक्त होना चाहिए। रचना,रचना होती है,उसे स्त्री या पुरुष रचना के रूप में बॉटकर नहीं देखा जाना चाहिए,परंतु आज तक महिला लेखन को केवल स्त्री–विमर्श तक ही मर्यादित करके उसका अध्ययन–अध्याय एवं अनुसंधान किया जाता रहा है। इस वृत्त को तोड़ने की दृष्टि से यह प्रस्तुत ग्रंथ मौलिक है। इसमें महिला उपन्यासकारों के बहुआयामी लेखन का अध्ययन किया गया है।

महिलाओं ने ज्यादातर कथा साहित्य में ही अपनी कलम चलाई हैं। महिला लेखिकाओं ने समाज के प्रत्येक स्तर के लोगों के जीवन की पीड़ा, त्रासदी,वेदना,आज वैश्वीकरण के दौर में महिला लेखिकाओं की अभिव्यक्ति महत्वपूर्ण उपलब्धि है। महिला लेखन पर आरोप लगाया जाता है कि वह परिवार तक ही सीमित है,परंतु प्रस्तुत ग्रंथ के द्वारा यह सिद्ध किया गया है कि महिला लेखन बहुआयामी है। उसमें परिवार ही नहीं पूरा समाज समाहित है। समाज का परिवेश, हाशिए का समाज समाविष्ट है। साथ ही अनेक समस्याओं को बहुत संवेदनशीलता एवं सूक्ष्मता से महिला उपन्यासकारों ने उजागर किया है।

जगदीश्वर चतुर्वेदी ने कहा है,' साहित्य'के माध्यम से सामाजिक विषमताओं एवं लिंगभेदीय असमानताओं के उद्घाटन में महत्वपूर्ण मदद मिलती है, बशर्ते कि साहित्य स्वयं में लिंगभेदीय पूर्वाग्राहों से मुक्त हो। हकीकत यह है कि पुरुष निर्मित साहित्य रूप में पुरुष पाठ का निर्माण हुआ है और तद्नुरूप पुरुषवादी साहित्यिक मानदंडों का भी निर्माण हुआ है। पुरुष का पाठ ,मानदंड और रूप–तत्व सभी आमतौर पर साहित्य के पर्याय के रूप में स्वीकृत कर लिए गए हैं।पुरुष लेखन से भिन्न स्त्री लेखन को आमतौर पर साहित्य की मुख्य धारा में सम्मानजनक दर्जा नहीं मिला है। समकालीन शब्द कालीन विशेषण में सम उपसर्ग जोड़ने से बना है। कालीन का अर्थ है काल में या समय में। सम उपसर्ग का प्रयोग प्रायः एक ही या एक साथ के अर्थ में होना है। अतः समकालीन शब्द समय की धारणा से संबंध एक विशेषण है जो सामान्यता एक ही समय में रहने या होने वाले रचनाकारों का बोध कराता है। नालेदा अद्यतन कोश में भी समकालीन शब्द का प्रायः सही अर्थ दिया गया है। इस कोश के अनुसार समकालीन शब्द सम उपसर्ग को कालीन काल की अवधारणा से जुड़ा हुआ एक विशेषण में लगाकर बनता है,जिसका अर्थ है जो एक ही समय में हुआ है। आजकल यह देखने में आ रहा है कि इन दिनों आधुनिक, समकालीन,अत्याधुनिक ,समसामयिक,सांप्रतिक और फिलहाल जैसे शब्दों के प्रयोग में पूरी सावधानी नहीं बरती जाती हैं। विशेषकर आधुनिक,समकालीन और सामयिक में अर्थ का काफी अंतर है।

आधुनिक का अर्थ काल–सापेक्ष भी है जबकि समकालीन का अर्थ केवल काल–सापेक्ष है। इसीलिए आधुनिक और समकालीन एक–दूसरे के पर्याय नहीं है।जो आधुनिक है वह भी समकालीन हो सकता है और समकालीन के लिए यह आवश्यक नहीं कि वह आधुनिक हो। अर्थात् आधुनिक हुए बिना भी कोई समकालीन हो सकता है। आज के अधिकतर साहित्यकार वचन प्रवीण होकर ही संतुष्ट हैं। कलम के दायित्व बोध से विमुक्त अधिकतर समकालीन साहित्यकार बिना सिद्धि के प्रसिद्धि के आखेट में निकला हुआ अंध अहेरी बनकर रह गया है। भीड़ के बीच चारों ओर से घिरा हुआ आज का व्यक्ति एकाकी है। जबकी सर्व विदित तथ्य यह है कि वह अकेले में भीड़ के भीषण

दबाव को झेलता हैं। आज मनुष्य की स्थिति बहुत ही विचित्र है ।

साहित्य में एक ओर तो सिद्धातों की बड़ी –बड़ी और सूक्ष्म बातें विमर्श और बहस के केन्द्र में रहा करती है। तो दूसरी ओर पद, पैसा,प्रतिष्ठा, संपर्क, जाति–बिरादरी, गोत्रादि के विभिन्न संदर्भों से समीकरणों के आधार पर मूल्यांकन की तथाकथित प्रक्रिया का यज्ञ भी निर्भीक भाव से जारी रहता है। हमें यह ध्यान में रखना होगा कि साहित्य की पहली और अनिवार्य शर्त का तुक केवल पीड़ा से नहीं मिला है। बल्कि उसमें जीवन की सुखात्मक झाँकियाँ भी सम्मिलित होती है। साहित्य में अंकित मनुष्य जीवन को अगर समझना है, तो वह जिस समाज में रहता है उस समाज को,समाज जीवन को समझना अत्यावश्यक बन जाता है। जिसे समझने के लिए पहले हमें समाज का अध्ययन करने के शास्त्रीय मानदंडों को समझना आवश्यक बन जाता है। इन मानदण्डों का शास्त्र याने समाजशास्त्र कहा जाता है। तो साहित्य के समाजशास्त्रीय अध्ययन से पहले समाजशास्त्र को समझना आवश्यक हैं।

महिला लेखन नारी विषयक समस्याओं से जुड़कर भी सामाजिक सरोकारों से अछूता नहीं रहा है। इसमें मानवीय संबंधों को जाँचने और परखने की सूक्ष्म दृष्टि निश्चित रूप से विद्यमान है और सामाजिक यथार्थ के अंकन की कोशिश भी स्पष्ट दिखायी देती है। कृष्णा सोबती की संपूर्ण कथा कृतियाँ सूरजमुखी अंधेरी के ये बिछुड़िया अनारों और बेघर की पाशों अनारों और संजीवनी पुरुष की रूढ़िवादी संकीर्णताओं का भाव उनमें नहीं है। महिला लेखन बहुआयामी होने के कारण लोकप्रियता के जिस सोपान तक पहुँचा संभवतः इसका कारण स्वानुभूति, संघनता ,विचारों की गहनता और विषय की रोचकता है।

सह लेखन अतीत को ध्वस्त वर्तमान से संघर्ष और सुखद भविष्य के सपने संजोने के लिए नारी को प्रेरित करता है। नारी सपस्याओं को नहीं अपितु स्वयं नारी को कैनवास पर उतारकर पूर्णतः अंतरंग होकर उस पुरुष के समकक्ष लाने की यह कोशिश वस्तुतः सत्य है। नारी की वर्तमान स्थिति को लेकर आज की लेखिका के मन में असंतोष एवं आक्रोश है। सामाजिक वैशम्य से जन्मी पीड़ा को लेकर छटपटाहट है और मुक्ति की उत्कंठा उसके रोम–रोम में परिव्याप्त है। सुधीश पचौरी का मत था कि साहित्य में भी स्त्रीवाद एक ग्लोबल आंदोलन है इसीलिए यह लेखन से अधिक एक राजनीतिक संघर्ष है,निर्मल वर्मा ने कहा कि स्त्री संवेदना का होना एक बात है, पर नारीवाद का झंडा उठाए घूमना दूसरी बात। केदारनाथ सिंह ने दूसरी भाषाओं के महिला लेखकों की रचनाओं के हिन्दी अनुवाद के खराब स्तर पर दुख प्रकट किया।

डॉ. चमनलाल ने कहा कि जब तक समाज में असमानता है तब तक साहित्य में भी रहेगी। हिन्दी की वरिष्ठ लेखिका कृष्णा सोबती ने सदा की तरह स्त्री लेखन शब्द पर एहसान जताते हुए कहा कि लेखन एक बड़ा अनुशासन है इसे महिला लेखन के छोटे चौकटे में कैद नहीं किया जा सकता। महिला लेखन करने से हर कोई हमें दलित समझने लगता है। उन्होंने पूछा,आप यदि लेखक हैं तो मैं महिला लेखक क्यों हूँ, उन्होंने कहा कि हमारी दिलचस्पी शब्द संस्कृति को बचाने से अधिक साहित्य में राजनैतिक कारोबार करने में है। कहते है साहित्य में रंग वर्ण, जाति सम्प्रदाय का भेद नहीं होता । पर मै कहती हूँ होती हैं। जो लिख रहा है, उसे वर्षो से अपने संस्कार,इतिहास,परिवेश से जो सोच मिली है,जो मानसिकता मिली है,उसे वर्षों से अपने संस्कार,इतिहास ,परिवेश से जो सोच मिली है,जो मानसिकता मिली है वह सब उसके साहित्य में परिलक्षित होता है। इसीलिए वही कथानक जब चित्रा मुद्गल के हाथ में आता है तो उसका ट्रीटमेंट बिल्कुल भिन्न होता है।

इस समय की लेखिकाएं स्त्री की नयी छवि गढ़ने की कोशिश कर रही हैं। वहीं स्त्री जब 'एक जमीन अपनी' में आती है, तो वह संतुलित ,पूरी मानवीय गरिमा के संग ,क्या उसको चुनना है, क्या छोड़ना है इस मानवीय बुद्धि के संग,क्षमता के संग आती है। अन्ततः एक रास्ता भी बताती है कि लड़की का क्या अभीष्ट होना चाहिए, क्या नहीं होना चाहिए। इस दशक का कथा–साहित्य समस्याओं की प्रस्तुति का साहित्य है। जीवन के अनुभवों को बाँटना सर्वांगीण सन्दर्भों में बिम्बों को तलाशता तथा स्त्री विमर्श जैसी अलगाती मुद्राओं में क्षत–विक्षत चेहरे वाली सोच को हटाता, रातनीतिक विद्रूपताओं का पर्दाफाश करता है यह कथा–साहित्य। आतंकवाद, हिंसा, धर्मांध संकीर्णताओं के बीच संरचनावाद और पूँजीवादी खतरों में यह साहित्य टुकड़ों–टुकड़ों में विभक्त मानवीय चेतना को समग्रता में सुरक्षित करके इतिहास के नए मानदण्ड भी स्थापित कर रहा है।

अतः इस दशक के कथा कथा–साहित्य में अप्रासंगिक रूढ़ियों को ध्वस्त करने तथा नये मूल्यों को स्थापित करने की छटपटाहट दिखाई देती है। यद्यपि इस दशक में भीष्म साहनी,उदय प्रकाश,राजकमल चौधरी,रवीन्द्र कालिया,चंद्रकांता ,कृष्णा सोबती,चित्रा मुद्गल,महीप सिंह, काशीनाथ सिंह,राजेन्द्र यादव तथा नासिरा शर्मा आदि साहित्यकार उल्लेखनीय है। वास्तव में लेखन की कसौटी पुरुष एवं महिला लेखन की अलग–अलग नहीं हो सकती। प्रत्येक लेखक सत्य की तलाश,सम्भावनाओं की तलाश अपनी संवेदनात्मक आवश्यकता के अनुरूप करता है। इस तरह से हर लेखक हर दूसरे लेखक से भिन्न होता है। ऐसी स्थिति में एक वर्ग के रूप में उनके लेखन को विभाजित कर उसकी करना उन्हें खाँचों में सीमित करने का प्रयास ही दिखायी देता है। खाँचे में विभाजित कर उसकी चेतना की अभिव्यक्ति को परखने,मूल्यांकित करने का अर्थ होगा इसकी सामाजिक उपस्थिति को प्रति–संसार के रूप में स्वीकृति देना काव्य मीमांसा में राजशेखर भी इस विभाजन के पक्षधर नहीं हैं। महत्वपूर्ण प्रश्न इस संदर्भ में यह है कि उनके लेखन को इस पुरुष

प्रधान व्यवस्था में रचे बसे आलोचक किस कोटि का दर्जा देते है। महिला लेखन के प्रति उनका दृष्टिकोण पूर्वाग्रह ग्रस्त एवं दोयम दर्जे का है। उस पर यह आरोप आसानी से लगा दिया जाता है कि उनका लेखन सीमित अनुभव संसार से सम्बन्ध है और इसी कारण वे कालजयी रचनाएँ नहीं रच पातीं। प्रत्येक लेखक, आलोचक, विचारक, शब्दशिल्पी, सचेतन या अर्द्धचेतन रूप से स्त्री पुरूष के बौद्धिक स्तर की भिन्नता को स्वीकार करके ही चलता है।

वह स्वयं को स्त्री से श्रेष्ठ मानता है। अतः पुरुष लेखक का अपने आपको स्त्री लेखक से ज्यादा श्रेष्ठ मानना स्वाभाविक ही होगा। अधिकतर पुरुष लेखकों की दृष्टि में महिला लेखन जड़, नीरस, भावुक, लिजलिजा तथा आत्म केन्द्रित है और उसका सारा सामाजिक मूल्यांकन सबसे पहले शरीर का मूल्यांकन है। नारी लेखन में पुरुष के निगाह में अपना विसर्जन एक विशेष पुरुष रवैये या रूढ़वादी दृष्टिकोण का अनुमोदन है। यह अनुमोदन वादी साहित्य लेखन रूढ़ियों के आस पास ही घूमता हैं। दयनीय विद्रोह का भ्रम देता हुआ। प्रभा खेतान इस संदर्भ में स्त्री की अपनी भाषा का प्रश्न उठाती हैं, क्योंकि किसी भी समुदाय का अनुभव जगत उस समुदाय के भाषायी अभ्यास द्वारा ही निर्मित होता है और उसके अभाव में उसे परम्परा से प्राप्त पुरुषों की भाषा में ही अपने अनुभवों को सम्प्रेषित करना पड़ता है। और शायद यही कारण है कि प्रचलित वर्चस्ववादी भाषा स्त्री की वाणी नहीं बन पाती हैं और बहुत कम लेखिकाएं स्त्री की निजी भाषा खोजने की चिंता करती है तो वस्तु से व्यक्ति के रूप मे पहचान बनाने को तत्पर स्त्री क्या इस पुरुष सत्तात्मक परिवेश में यह मानने को बाध्य हो जाए कि चिंतन की प्रक्रिया से उसका कोई सरोकार नहीं है,तर्क की भाषा उसे नहीं आती तथा बड़ी राष्ट्रीय,सामाजिक समस्याओं से निपटने में वह सक्षम नहीं। बहुत से कारण है। जिससे स्त्री लेखन में बहुत कुछ अनकहा रह जाता है या अतिसंक्षिप्तीकरण का शिकार होकर टिप्पणी मात्र रह जाता है। लेखन की कसौटी पुरुष एवं महिला लेखन की अलग–अलग नहीं हो सकती।

आधुनिक काल में पहुचकर तो हिंदी साहित्य के लिए नारी सर्जकों का योगदान बहुत बढ़ गया है। काव्य और गद्य दोनों क्षेत्रों में नारिया समान स्तर पर सक्रिय रही हैं। पूर्व प्रेमचंद या छायावादी युग के जिस 'बंग' महिला नामक कहानी लेखिका का नाम मिलता है उसके बारे में सन्देह है कि वह नारी ही थी अथवा कोई छद्मनामी पुरूष। जो भी हो इतना स्पष्ट है कि वहाँ मान्यता और प्रतिष्ठा इस नारी नाम को ही प्राप्त हो सकी। इसके बाद गद्य सर्जना की दृष्टि से प्रेमचंद युग के साहित्यकारों में श्रीमती सुभद्रा कुमारी चौहान का नाम आता है। वे जितनी अच्छी लेखिका और कहानीकार थीं, उतनी ही सफल कवियत्री भी थी।

इन्हीं के समकालीन नामों में अन्य दो नाम भी विशेष उल्लेखनीय एवं महत्वपूर्ण हैं। एक नाम तारा पाण्डेय, छायावादी युग के कवि–कवियोगियों में यह नाम महत्वपूर्ण माना जाता है दूसरा और अब तक का सर्वाधिक महत्वपूर्ण नारी नाम है, श्रीमती महादेवी वर्मा यह हिंदी साहित्य में दूसरी मीरा कही जाने वाली कवियत्री हैं। छायावाद हिंदी साहित्य का प्रमुख युग माना जाता है। इस युग को हिंदी साहित्य में लाने का श्रेय जिन कवियों को है महादेवी वर्मा का उनमें प्रमुख स्थान है। काव्य और गद्य के विभिन्न विधात्मक क्षेत्रों में इनके योगदान को आने वाली शताब्दियों तक कौन भुला सकता है? हमारे विचार में काव्य की चर्चा हो यास गद्य के विधात्म रूपों को श्रीमती महादेवी की चर्चा के बिना से अपूर्ण ही समझा जाएगा। महादेवी छायावादी काव्यधारा के चार स्तंभों में से एक प्रमुख स्तंभ तो हैं ही, गद्य–सर्जना के क्षेत्रों में उन्हे एक प्रमुख शैलीकार का मान और महत्व प्रदान किया जाता है।

निहार, रश्मि, नीरजा, सांध्यगीत, दीपशिखा, संघिनी उनकी प्रमुख रचनाएँ हैं। पद्य के साथ–साथ गद्य में भी उनका प्रमुख योगदान रहा है। उनकी रचनाओं में संवेदनशीलता, कौतूहलमिश्रित वेदना की प्रधानता है। उन्होंने चैतन्य बोध स्पर्श कर भावनिष्ठ हृदय से वेदना का घूँट पीकर प्रेम साधना की है। आधुनिक काल के साहित्य जगत में नारी की प्रतिभा विद्वता एवं गतिमा को अक्षुण्ण बनाए रखने में उनका विशेष योगदान है उन्होंने हिंदी साहित्य को छायावाद, रहस्यवाद, प्रतीक योजना, वेदना, गीतिकला, प्रकृति चित्रण का अनुपम उपहार दिया। उनके कारण हिंदी साहित्य उनका हमेशा ऋणी रहेगा।

आज कई नवयुवतियाँ हिंदी काव्य–साहित्य के क्षेत्र में अपनी विशिष्ट प्रतिभा का परिचय दे रही हैं। आज का युग गद्य–रचना का युग ही प्रमुख स्वीकारा जाता है। गद्य के विधात्मक रूपों विशेषकर कहानी उपन्यास के क्षेत्र में कई नारी सर्जकों का नाम बड़े ही सम्मान के साथ लिया जाने लगा है। आज नारी ने साहित्य के क्षेत्र में सक्रिय भागीदारी निभाते हुए जीवन और समय के जटिल प्रश्नों से जूझती समाज को दस्तावेजी कृतियाँ दीं, मन्नू भंडारी जैसी कुछ ऐसी कहानी लेखिकाएँ भी हैं कि जिनकी कहानियों के अनेक फिल्मी एवं नाटय रूपान्तर सफलता और धूम–धड़ाके के साथ प्रस्तुत किये जा चुके और आज भी होते रहते हैं। कृष्ण सोबती का 'जिन्दगीनामा' दिलोदनिश मन्नू भंडारी का 'महाभोज' महाश्वेता देवी का 'जगल का दावेदार' प्रभा खेतान का 'तालाबंदी' मृदुला गर्ग का 'अनित्य' आदि अनेक रचनाएँ हैं अनेक कृतियों के माध्यम से लेखिकाओं ने संबंधों के घात–प्रतिघात घर–बाहर के दोहरे दायित्व निभाते हुए भी दुय्म दर्जे की स्थिति भोगने वाली नारी की विवशता, सामाजिक तथा संवैधानिक अधिकारों के होते हुए दफ्तर, खेत, कारखानों में भेदनीति की शिकार होने की विडम्बना आदि सामाजिक प्रश्नों पर विचार किया है।

बीसवीं शताब्दी के अन्तिम दशक में राष्ट्रीय स्तर पर महिलाओं ने सामाजिक, आर्थिक, सांस्कृतिक और राजनीतिक क्षेत्र में प्रवेश कर पुरूषों के लिए वर्चस्व एवं एकाधिपत्य को बखूबी तोड़ा है और हर क्षेत्र में बराबरी की हिस्सेदारी निभाते हुए अपनी एक पृथक् छवि और पहचान निर्मित की है। संयुक्त राष्ट्र संघ एवं राष्ट्रीय मानवाधिकारों ने महिलाओं के आगे बढ़ने और विकास करने का मार्ग प्रशस्त किया है।

भूमण्डलीकरण–वैश्वीकरण तथा उदारीकरण के चलते आधुनिकीकरण की वैचारिकी एवं कार्य–शैली ने महिलाओं में हर क्षेत्र में प्रवेश करने की जो स्वतंत्रता और चाह उत्पन्न की है, उससे वे आत्मनिर्भर और निडर बनी हैं। अभी भी भारतीय समाज में सामन्ती अवशेष बचे हैं। जिन्हें इन महिलाओं को मिलजुलकर विनष्ट करना है। यह सच है कि भारत में अमेरिका और फ्रांस जैसे देशों की तरह नारी आंदोलन नहीं हुए, लेकिन उसकी गूंज यहाँ तक अवश्य पहुँची जिससे भारतीय महिलाओं में समान अधिकार और स्वतंत्रत होने की इच्छा बलवती हुई। परिणामस्वरूप साहित्य–लेखन में भी उनकी घुसपैठ बढ़ी। वे कविता, कथा–साहित्य, आत्मकथा, जीवनी, संस्मरण आदि साहित्यिक विधाओं में इतनी तेजी से आगे बढ़ीं कि पुरूषवाची लेखक पीछे रह गये। इनके लेखन में मूल रूप से नारी की सामाजिक, आर्थिक, सांस्कृतिक और राजनीतिक विसंगतियों, विडम्बनाओं और समस्याओं तथा स्थितियों को यथार्थ परक दृष्टि से रेखांकित किया गया है। ये सभी विषय नारी विमर्श से जुड़े हुए हैं। इसी को आधार बनाकर नारी–विमर्श का साँचा तैयार कर लिया गया और उसमें महिला–लेखन को शामिल कर लिया गया। इस प्रकार महिला–लेखन स्त्री–विमर्श का आधार बन गया।

अमृता प्रीतम, चंद्रकिरण, उषादेवी मित्र की 'रचना यात्रा', उषा प्रियंवदा, मन्नू भंडारी, कृष्णा सोबती, शशि प्रभा शास्त्री, मृणाल पाण्डेय, सूर्यबाला, राजी सेठ, मृदुला गर्ग, मंजुल भगत, नमिता सिंह, नासिरा शर्मा, कुसुम अँचल, मणिका मोहिनी, मैत्रेयी पुष्पा, ऋतु शुक्ला, शिवानी, तस्लीमा आदि अनेकानेक रचनाकारों की सशक्त कृतियों से समृद्ध होती हुई आज नारी चेतना संपन्न ठोस धरती पर पहुँच गई है, लेखिकाओं ने जहाँ जीवन के छोटे–बड़े, सच सुख–दुख, रचनाओं में उकेरे हैं, वहींसमय के ज्वलंत प्रश्नों से भी वे टकराई, आज भी नारी हिंदी साहित्य में सक्रिय भागीदारी निभा रही है तथा अपनी विशेष भूमिका द्वारा साहित्य में स्थान बनाते हुए जगत में पुरूष के समांतर पहुँच रही है। हिंदी साहित्य को नारी ने हर युग में उभारा है आदिकाल से आते–जाते 20वीं शताब्दी के अंतिम वर्ष तक नारी साहित्यकारों ने अपनी प्रतिभा से सृजनात्मक कार्य करके विश्व में स्थान, प्रतिष्ठा स्थापित की है।

सन् 1947 में हमारा भारत स्वंतंत्र हुआ और इस राष्ट्रीय स्वतंत्रता ने कई महिलाओं के बँधनों को भी स्वतंत्र कर दिया। शिक्षा का स्तर बढ़ाने से महिलाओं का शैक्षिक विकास होता गया और महिलाओं के लिए विभिन्न क्षेत्र खुल गए। उन्हें हर जगह सम्मान दिया गया, भला साहित्य का क्षेत्र इससे कैसे छूटता और साहित्य में भी इन महिला लेखिकाओं ने अपनी कलम का जादू दिखाया। स्वयं महिला लेखिका द्वारा महिला लेखन के अंतर्गत उनकी पहचान का विरोध वस्तुतः नारी मुक्ति का ही आंदोलन है।

जिससे अब मानकर चला जाता है कि कोई क्षेत्र महिलाओं के लिए वर्जित नहीं है। उस संविधान का भी अंग है जिसमें किसी प्रकार का भेजभाव किए बिना हर काम के लिए स्त्री और पुरूष के समान समझे जाने की बात की गई है। संविधान ने नारी को अधिकार दिये, कानूनी संरक्षण भी मिला मगर सामाजिक अन्तर्धाराओं के अन्तर्विरोधों में अहंग्रस्तता बढ़ती चली गई। आज नारी ने स्वतंत्रता को ही नारी मुक्ति आंदोलन का रूप स्वीकार कर लिया और स्वच्छंदता से विहार करने लगी है। नारी की इस .स्वतंत्रता के अनेक दुष्परिणाम और प्रतिक्रियाएँ सामने आते दिखाई दे रहे हैं। घर से बाहर निकलने वाली नारी आज अधिक यौन–शोषण और बलात्कार की शिकार हो रही है।

अपहरण और स्त्रीत्व हरण के साथ–साथ शिक्षित लड़कियों को भी दहेज की बलिवेदी पर चढ़ना पड़ता है। एक ओर विद्रोह है दूसरी ओर कुंठा और समाज व्यवस्था का यह दानवी आक्रामक रूप। पुरूष की लोभी मानसिकता जहाँ उसकी अकर्मण्यता और अधिकार की भावना को उकसाती है, वहाँ भौतिकता की होड़ ने भी नारी को ही शोषित बनाया है। अधिकारों की बढ़ती माँग, स्वार्थ लिप्सा और उसी अनुपात में घटती हुई जिम्मेदारी की भावना, घटती हुई सहनशीलता और निरंतर घटती हुई त्याग–वृत्ति के कारण भी तथाकथित आजाद नारी की आज यह दुर्दशा है।

निष्कर्ष

इन सारे विवेच्य एवं विश्लेषण के बाद यह बात कहने की कोई अधिक या विशेष आवश्यकता नहीं रह जाती कि हिंदी साहित्य को नारियों की देन क्या और कितनी है। वास्तव में भारतीय नारियों ने जीवन के अन्य सभी क्षेत्रों के समान साहित्य क्षेत्रों को भी अपनी सृजनात्मक और जागरूक प्रतिभा से समृद्ध एवं प्रशस्त किया है। इसमें तनिक भी संदेह नहीं। उन्होंने साहित्य के हर युग के हर रूप को अपनी कोमल कान्त भाव–प्रवणता से प्रभावी बनाया है। उसे भाषा शैली और नवीन शिल्प तो दिया है, भावी विचारों का अजस्न मानवीय स्त्रोत भी विधात्मक तटबन्धों में प्रवाहित किया है। उसमें स्वर संगीत की सरिता भी बहाई है और नव निर्माण के ज्वार भी उभारें हैं। साहित्य के माध्यम से नारियों ने माँ की ममता, बहन का स्नेह, प्रियतम का प्यार सभी कुछ दिया। संबंधों की चर्चा जितनी गहराई से नारी सर्जकों की रचनाओं में

मिलती है। अन्यत्र कहीं सुलभ नहीं है। इस सारे विवेचन का सारांश यह है कि नारी जीवन ने हमारे स्थूल जगत के समान ही साहित्य जगत को भी तपःपूत। कालात्मक प्रतिभा से ऊर्जस्वी और अनवरत गतिशील बनाया है– यह देन कम करके रेखांकित नहीं की जा सकती।

संदर्भ सूची

1. समकालीन महिला लेखन–डॉ. ओमप्रकाश शर्मा, पूजा प्रकाशन दिल्ली
2. अन्तिम दशकों का हिन्दी साहित्य, मीरा गौतम, वाणी प्रकाशन, नई दिल्ली, 2001
3. स्त्रीवादी साहित्य विमर्श–जगदीश्वर चतुर्वेदी, अनामिका प्रकाशन, नई दिल्ली संस्करण 1998
4. आधुनिक हिन्दी उपन्यासों में नारी के विविध रूपों का चित्रण–डॉ. मोहम्मद अजहर ढेरीवाला, चिन्तन प्रकाशन, 22. ए, मछरिया रोड, कानपुर, संस्करण 1999
5. अन्तिम दशक की लेखिकाओं के उपन्यासों में नारी, डॉ. रामचन्द्र माली, विद्या प्रकाशन सी–449, गुजैनी कानपुर संस्करण 2009
6. स्त्री–विमर्श समकालीन चिन्तन, संपादक ऋचा शर्मा, मध्य प्रदेश राज्य हिन्दी साहित्य सम्मेलन, सतना, संस्करण 2009
7. महिला उपन्यासकारों के उपन्यसों में नारीवादी दृष्टि, डॉ. अमर ज्योति, अन्नपूर्णा प्रकाशन, कानपुर–संस्करण 1999
8. समकालीन महिला उपन्यासकारों कके उपन्यासों में नारी–विमर्श, डॉ. मुक्ता त्यागी, अमन प्रकाशन, रामबाग, कानपुर, संस्करण 2012
9. स्त्री–सशक्तीकरण के विविध आयाम, संपादक–डॉ. ऋषभ देव शर्मा, गीता प्रकाशन, प्रथम तल, 4–2–771, गीता भवन, हैदराबाद, 2004
10. अन्तिम दशक की हिन्दी लेखिकाओं के उपन्यासों में नारी–डॉ. सय्यद अमर फकिर, समता प्रकाशन, कानपुर, संस्करण प्रथम 2016